ओ३म्

टंकारा ज्योति प्रथम किरण—

शुभ सम्मत्यर्थ समर्पित

राम

को
श्यामकिशोर आर्य
सिद्धान्तशास्त्री

दयानंद, तुलसी, वाल्मीकि के दृष्टि पथ में

लेखक—
श्याम किशोर आर्य,
सिद्धान्त शास्त्री

प्रकाशक—
वेदप्रिय आर्य
टंकारा ज्योति प्रकाशन
२२०, चौखंडी कृष्णनगर, प्रयाग

अगस्त सन् १६७६ मूल्य— ५० पै०

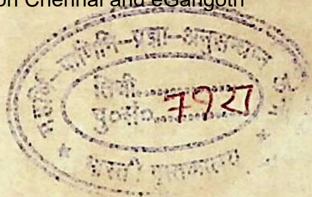
जन सेवा प्रेस, विवेकानन्द मार्ग, इलाहाबाद।

समर्पण

पूज्य पिता श्री मोहनलाल जी
की पावन स्मृति में
जिन्होंने
बसंत पंचमी २ फरवरी १९७९
को महाप्रयाण किया।

फहरे ओ३म् की दिव्य पताका,
वेद-कथा घर-घर हो।
दयानन्द की जय ध्वनि गूंजे,
और आर्य समाज अमर हो॥

— श्याम किशोर आर्य, सिद्धान्त शास्त्री



राम

दयानन्द तुलसी वाल्मीकि के दृष्टि पथ में

महापुरुषों की कोटि में दाशरथि राम एक उज्वलतम नक्षत्र हैं। इनकी कथा एवं चर्चा अनेकानेक प्रकार से हुई है। विश्व-साहित्य का प्राचीन ग्रन्थ इलियट भी राम कथा की छाया पर रचा गया है। जावा, बाली, सुमात्रा तथा मैक्सिको (दक्षिणी अमेरिका) आदि सुदूर तक राम की कीर्ति छाई है।

राम नाम के कई व्यक्ति प्रसिद्ध हो गये हैं। महर्षि जमदग्नि के पुत्र राम जो परशु धारी होने से परशुराम नाम से विख्यात हैं।

महाराज चक्रवर्ती दशरथ के पुत्र सारंगधनुषधारी राम जो रावण के मद को चूर कर अपनी पत्नी को छुड़ा लाने वाले— मर्यादा पुरुषोत्तम राम जो धनुर्धारी राम कहलाते हैं।

द्वापर युग काल में श्री कृष्णचन्द्र के बड़े भाई राम को हल-धारी राम, बलराम या हलधर जिनका वर्णन महाभारत काल में आता है।

ये सभी राम नाम वाले व्यक्ति हैं परन्तु इनको भिन्न-भिन्न

नामों से जाना जाता है । परशु राम, धनुर्धर राम, तथा हलधर बलराम । वर्तमान काल के भारत के प्रतिरक्षा मन्त्री श्री जगजीवन राम भी राम नाम से पुकारे जाते हैं ।

राम कहने मात्र से यह मन में भावना उठती है कि बात दशरथ पुत्र की ही चर्चा हो सकती है क्योंकि राम नाम से आप ही प्रख्यात हैं और जन-जन में उनके प्रति प्रत्येक भारतवासी के हृदय में अटूट प्यार एवं श्रद्धा है ।

युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने रामचन्द्र जी का स्मरण इन शब्दों में किया है—"भला कहो तो सीता रामादि ऐसे दरिद्र और भिक्षुक थे । यह उनका उपहास और निन्दा नहीं तो क्या है ? क्या इससे बड़ी अपने माननीय पुरुषों की निन्दा होती है ? भला जिस समय ये विद्यमान थे उस समय सीता, रुक्मणी, लक्ष्मी और पार्वती को सड़क पर व किसी मकान में खड़ी करके पुजारी कहते कि आओ इनके दर्शन करो और कुछ भेंट पूजा धरो तो सीता रामादि इन मूर्खों के कहने से ऐसा काम कभी न करते और न करने देते । जो कोई ऐसा उपहास उनका करता उसको बिना दण्ड दिये कभी न छोड़ते ।

(सत्यार्थ प्रकाश एकादश सम्मुल्लास)

महर्षि वाल्मीकि राम का परिचय देते हुये लिखते हैं कि—

"इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न श्रीराम गुणों के भंडार हैं । उनकी आत्मा संयत है । वे तेजस्वी, धैर्यवान, गुणवान और वशी हैं । उनकी बुद्धि प्रखर है । वे नीतिज्ञ, भाषण पटु शत्रु विजेता, धर्म के ज्ञाता और सत्य प्रतिज्ञ है । उन्होंने क्रोध को जीता हुआ है । वे जितेन्द्रिय हैं ।

वे सभी लोकों के रक्षक हैं और स्वधर्म के परिपालन में प्राणि मात्र उन्हें प्रिय हैं। वे साधु स्वभाव हैं। उनकी आत्मा उन्नत है वे विद्वान हैं।

अपने इन उदार गुणों से सब भांति वे सम्पूर्ण प्रजा को रंजित एवं संतुष्ट रखते थे। इसलिये यथार्थ रूप में उनका 'राम' यह नाम लोक विख्यात था।"

(वाल्मीकीयं रामायण बालकाण्ड प्रथम सर्ग)

राम दशरथ अर्थात् दश इन्द्रियों के रथ के रथी थे।

रावण दशमुखी अर्थात् दश इन्द्रियों का भोगी था।

तभी ऋषि दयानन्द के परम भक्त माननीय पंडित गंगाप्रसाद उपाध्याय ने वाल्मीकि के विषय में लिखा है—

"राम की लिखकर कथा, तुमको वका हासिल हुई।
राम को भी तूने बखसी, जिन्दगी ये जा विदां॥"

राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने लिखा है—

राम तुम्हारा वृत्त स्वयं ही काव्य है, कवि कोई बन जाये सहज सम्भाव्य है।

ऋषि दयानन्द ने रामायण एवं महाभारत दो ग्रन्थ प्रामाणिक इतिहास के माने हैं।

महर्षि वाल्मीकि ने रामायण में तथा महर्षि व्यास ने महाभारत में राम के चरित्र का वर्णन किया है वर्तमान काल में दोनों ग्रन्थ अपने वास्तविक रूप में नहीं हैं।

वाल्मीकि रामायण--

चतुर्विंशत्सहस्त्राणि श्लोकानामुक्तवानृषिः।
तथा सर्ग शतांपञ्च षट् काण्डानि च उत्तमम्॥

महर्षि वाल्मीकि लिखते हैं कि यह रामायण चौबीस हजार श्लोक, पांच सौ सर्ग छः कान्ड वाली है। उत्तर कान्ड सीता परित्याग कथा की रचना वाल्मीकि जी की नहीं है क्योंकि युद्ध कान्ड की समाप्ति पर महात्म्य एवं फलश्रुति आदि कहकर रामायण को समाप्ति कर दिया गया है वास्तव में यह कान्ड महा कवि भवभूति की रचना है जो रामायण में जोड़ दिया गया है। क्योंकि पांच सौ सर्ग युद्ध काण्ड में ही पूर्ण हो जाता है। उत्तार काण्ड मिला लेने पर पांच सौ चौतीस सर्ग हो जाते हैं।

इसी प्रकार महाभारत ग्रन्थ की रचना महर्षि व्यास ने चौबीस सहस्र श्लोकों में की थी इसका प्रमाण—

चतुर्विंशति साहस्त्री, चक्रे भारत संहिताम्।
उपाख्यानैर्विना तावद् भारतं प्रोच्यते बुधैः ॥१०१॥

(महाभारत आदि पर्व श्लोक १०१)

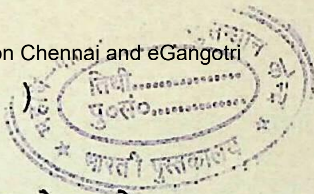
अतः इन आप्तों का प्रमाण ऋषि दयानन्द ने स्वीकार करके राम की वाल्मीकि रामायण की प्रामाणिकता स्वीकार की है और तुलसीकृत भाषा रामायण आध्यात्म रामायण, गड़बड़ रामायण आदि की अप्रमाणिकता की घोषणा बड़े साहस से की है।

गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा वर्णित रामचरित ऐतिहासिक तथ्य नहीं! वरन् रामकथा को आधार बनाकर उनके अपने स्वमत का प्रचार वाला ग्रन्थ रत्न है।

महात्मा तुलसी दास की राम निष्ठा अनूठी है। वे राम के विरोधी को अपनी फूटी आँखों से नहीं देखना चाहते। यथा—

जाके प्रिय न राम वैदेही,
तजिये ताहि कोटि वैरी सम यद्यपि परम सनेही ॥

(विनय पत्रिका)



उनकी घोषणा है—

(१) वारि मथे घृत होहि वरु सिक्ता से बरु तेल ।
बिनु (राम) हरि भजे न भव तरहि यह सिद्धान्त अपेल ।।

(२) रघुपति प्रथम प्रेम अनुमाना,
चितै पिता दीन्हऊ दृढ़ ज्ञाना ।।
ताते उमा मोक्ष नहिं पावा, दशरथ भेद-भक्ति मन लावा ।

(३) सगुण उपासक मोक्ष न लेहीं,
तिन्ह कह राम भक्ति निज देही ।।
बार बार करि प्रभुहि प्रणामा, दशरथ हर्षि गये निजधामा ।
(लंका कान्ड पृ० ६४५)

(४) मानस सुनत न मनहि आघाही ।
ता सम धन्य अवर कोउ नाहीं ।। (लंका कांड पृ० ५८१)

(५) सुन शुभ कथा भवानि, रामचरित मानस विमल ।।
(बाल कांड पृ० ६८)

(६) भाव कुभाव अनख आलसहू नाम जपत मंगल दिसि दसहू ।
(बालकांड पृ० २१)

(७) तरहि न बिनु सेये मम स्वामी ।
राम नमामि नमामि नमामी ।। (उ० कान्ड ७३५)

(८) जाकर नाम भरत मुख आवा ।
अधमौ मुक्त होई श्रुतिगावा ।।
राम नाम सुनि के जमुहाई । रस विशेष जाना कछु नाहीं ।।
(अरण्य कान्ड पृ० ४१९)

ये उद्धरण बतलाते हैं कि उन्हें ऊपरी मान्यता के विरोधी स्वीकार नहीं थे । और कहते थे जिसने मेरी रची हुई मान्यतानुसार राम

कथा सुनी नहीं उनके कान कान नहीं सांपो के निवास स्थल है ।

(i) जिन हरि (राम) कथा सुनी नहीं काना,
श्रवण रन्ध अहि भवन समाना ।।

(ii) सोई जग वन्चक सुनहु मुनि, जेहि मानस न सुहाय ।।
भव सागर महँ भ्रमत सो, अमित कल्प चलि जाय ।।

उस भय को दिखाकर उन्होंने अपनी परस्पर विरोधी मनमानी खिचड़ी पकाई है । तुलसीदास ने अपने आराध्यदेव राम को ईश्वर का अवतार सिद्ध किया है जबकि बाल्मीकि ने उन्हें राम महापुरुष के रूप में वर्णित किया है वे यथा—

स्वयं रामचन्द्र कहते हैं—

(i) आत्मानं मानुषं मन्ये राम दशरथात्मजं ।।११।।

(वाल्मीकि रामायण युद्ध सर्ग ११७)

मैं स्वयं को राम दशरथ का पुत्र अपने को मनुष्य मानता हूँ ।

(i) किं मया दुष्कृतं कर्म, कृतमन्यत्र जन्मनि ।
येन मे धार्मिको भ्राता, निहताश्चाग्रतः स्थितिः ।।

(युद्ध कांड श्लोक १६।१६)

मैंने पूर्वजन्म में कौन से दुष्ट (बुरा) कर्म किये थे जो कि मेरा धार्मिक भाई लक्ष्मण मेरे सामने गिरा (मरा) पड़ा है ।

(iii) त्ये जमां नर शार्दूल बुद्धि वैक्लव्यकारिणीम् ।
नैव पंचत्वमापन्नो लक्ष्मणो लक्ष्मि वर्धिनः । (१६।२४)

सुषेण वैद्य ने कहा—हे नर शार्दूल मानवों में सिंह समान आप शोक एवं व्याकुलता छोड़ दें ।

(iv) सुग्रीवो न च देवोऽयं, न यक्षो न च राक्षस ।
मानुषो राघवो राजन्, सुग्रीवश्च हरीश्वरः ।।

(सुन्दर का० ५-५१-१७)

हनुमान जी ने रावण से राम को मनुष्य बताया।

सुग्रीव न तो देव, न यक्ष न राक्षस है वरन् वानरों के राजा तथा रामचन्द्र मनुष्य हैं।

(रामायण एक अध्ययन (पृष्ठ ५६४)

नारद ने राम का परिचय बाल्मीकि जी को दिया—

विष्णु सदृशो वीर्य सोमवत् प्रियदर्शन—राम विष्णु के समान वीर्यमान् तथा चन्द्रमा के समान सबको प्रिय दर्शनीय है।

स्पष्ट है कि वे विष्णु के अथवा परमात्मा के अवतार नहीं थे यह महर्षि बाल्मीकि जी की मान्यता है।

गोस्वामी जी की मान्यता स्वयं राम तथा महर्षि दयानन्द एवं महर्षि वाल्मीकि विचार धारा से सर्वथा भिन्न है—वे स्थल-स्थल पर अपने प्रत्येक पात्र से राम को अवतार ही नहीं पूर्ण ब्रह्म घोषित कराते हैं यथा—

i—दशरथ—जाकर नाम सुनत शुभ होई।
मोरे गृह आवा प्रभु सोई।

ii—जनक—राम कहौं केहि भाँति प्रसंसा।
मुनि महेस मन मानस हंसा॥
,, करहि जोग जोगी जेहि लागी।
छोह मोह ममता मद त्यागी॥
,, नयन विषय मोकहुँ भयऊ, सो समस्त सुख भूल॥

iii—वशिष्ट—(अ) विधि हरि हर ससि रवि दिसिपाला।
माया जीव करम कुलिकाला॥
अपरि महिप जह लगि प्रभुताई।
जोगि सिद्धि निगमागम गाई॥
करि विचार जियं देखऊ नीके।

क॰

राम रजाई सीस सबही के।।

(ब) महिमा अमित बेद नहि जाना।

मैं केहि भाँति कहौ भगवान।।

iv—विश्वामित्र

प्रभु अवतरेऊ हरन महि भारा।

एहूँ मिसि देखौ पग जाई। करि विनती आनौ दोउ भाई।।

ग्यान विराग सकल गुन अयना। सो प्रभु मै देखव भर नयना।।

v—बाल्मीकि

श्रुति सेतु पालक राम तुम्ह जगदीश माया जानकी।

जो सृजति जगु पालति हरति रुख पाई कृपानिधान की।।

vi—सुतीक्ष्ण

निर्गुण सगुण विषम सम रूपं। ज्ञान गिरा गोतीतमनूपं।।

अमलमखिल मन वचनपारं। नौमि राम भंजन महि भारम्।।

vii—रावण

खरदूषण मोहि सम बलवंता। तिन्हहि को मारई बिन भगवन्ता।।

सुर रंजन भंजन महिभारा। जो भगवन्त लीन्ह अवतारा।।

तौ मैं जाई बैरु हठि करऊ। प्रभु सर प्रान तजे भव तरऊ।।

viii—मारीच

तेहि पुनि कहा सुनहु दस सीसा। ते नर रूप चराचर ईसा।।

तासों तात बयरु नहिं कीजै। मारे मरिय जिआए जीजै।।

ix—विभीषण

तात राम नहिं नर भूपाला। भुवनेश्वर कालहु के काला।।

ब्रह्म अनामय अज भगवन्ता। व्यापक अजित अनादि अनन्ता

x—शिव जी –

उमा अखन्ड एक रघुराई। नरगति भगति कृपालु दिखाई॥
(मानस रहस्य मथुरा प्रकाशन)

xi—तुलसी जी की उक्ति

(अ) मास दिवस कर दिवस का मरम न जानई कोई।
रथ समेत रवि थाकेऊ,निसा कवन विधि होई।
यह रहस्य काहू नहिं जाना।
दिनमनि चले करत गुन गाना॥

(आ) मन क्रम बचन अगोचर जोई।
दशरथ अजिर विचर प्रभु सोई।
निगम नेति शिव अन्त न पावा।
ताहि धरैं जननी हठि धावा।

(इ) जाकी सहज स्वास श्रुति चारी।
सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी॥

(ई) पूरन काम राम सुख रासी।
मनुज चरित कर अज अविनासी॥

xii—स्वयं राम से कहलवाया, शबरी को उपदेश देते समय
मम दर्शन फल परम अनूपा। जीव पाव निज सहज सरूपा।

यह समस्त वाद (अवतारवाद) राम के वास्तविक स्वरूप को नष्ट कर देता है।

उनकी वेद शास्त्रों पर श्रद्धा भक्ति, गुरुजनों की सेवा शुश्रूषा, अनाचारी अत्याचारी दुष्टों से विरोध।(निश्चरहीन करौं महि भुज उठाई प्रण. कीन्ह। सकल मुनिन के आश्रमहि जाय़ जाय सुखदीन्ह) मर्यादाओं का पालन तपोमय जीवन तथा कष्ट उठाना आदि खिलवाड़ है।

क्योंकि 'यथा अनेकन वेष धरि नृत्य करै नट कोई।
जोई जोई भाव दिखावै, आपु न होई न सोई ॥
(उत्तरकाण्ड पृष्ठ ६९९)
नट इव कपट चरित करि नाना।
क्योंकि रामचन्द्र यदि ईश्वर स्वयं पूर्ण ब्रह्म थे तब—
निसि प्रवेश मुनि आयसु दीन्हीं।
सबहिं सन्ध्या वन्दनु कीन्हीं ॥ (बाल कान्ड २५०)
पुर जन करि जोहार घर आये।
रघुवर सन्ध्या करन सिधाये ॥ (अयोध्या कान्ड पृ० २५०)
सन्ध्या (ध्यान) किसका करते थे ?
जौ जनतेउ बन बन्धु बिछोहू।
पिता वचन मनतेऊ नहि ओहू।
सुत वित नारि भवन परिवारा
होइ जाहिं जय बारम्बारा।
अस विचार जिय जागहु ताता
मिलहिं न जगत सहोदर भ्राता ॥ (लंका कांड)

यह विलाप यह स्पष्ट बतलाता है कि उनको यह ज्ञान नहीं था। चाहे कितनी ही वकालत की जाय परन्तु उनकी अल्पज्ञता का दोष तो बना रहेगा ?

जेहि अघ बधेऊ व्याघ जिमि बाली,
फिर सुकंठ सोई कीन्ह कुचाली
सोई करतूत विभीषण केरी
स्वपनेऊ सो न राम हिय हेरी
ते भरतहि भेटत सन्माने
राज सभा रघुवीर बखाने

यह अघ और पक्षपात दोष को विद्वान साहित्यिक तार्किक रामायणी करतूत एवं चूक की भ्रामक व्याख्या करके छिपा नहीं सकते । क्योंकि

अनुज वधू भगनी सुत नारी सुन शठ ये कन्या सम चारी ।
इन्हें कुदृष्टि विलोकहि जेही ताहि बधे कछु पाप न होही ॥

यदि बाली ने अपने अनुज की स्त्री को घर में रख लिया तो सुग्रीव ने बड़े भाई की स्त्री को अपने घर में रख लिया पटरानी बनाया । विभीषण ने मन्दोदरी बड़े भाई की स्त्री को पटरानी बनाया । यदि छोटे भाई की पत्नी कन्या है, तो क्या बड़े भाई की पत्नी माँ नहीं ?

फिर राक्षस या बानर कोई मनुष्य तो थे नहीं जिन्हें यह मर्यादा सिखाई जा रही है । अतः दोनों पापी हैं स्पष्ट क्यों नही कहते ।

राम कहते हैं—

(i) सुन गंधर्व (कबन्ध राक्षस) कहऊं मैं तोही ।
मोहि न सुहाई ब्रह्म कुल द्रोही ॥

(ii) मन क्रम वचन कपट तजि जो कर भूसुर सेव ।
मोहि समेत विरंचि सिव बरु ताकें सब देव ॥३३॥

(iii) सापत ताड़त परुष कहंता । विप्र पूज्य अरु गावहि सन्ता
पूजिय विप्र सीलगुन हीना । सूद्र न गुन गन ज्ञान-प्रवीना ॥

फिर क्यों रावण जो ब्राह्मण बंश का था उसे मारा । क्या राम ब्रह्म कुल द्रोही नहीं हैं । वह तो (उत्तम कुल पुलस्त्य कर नाती) ऋषि विश्रवा का पुत्र था ।

"—बन्दे ब्रह्मकुल कलंक शमन श्रीराम भूपप्रियम् ॥
(वन्दना श्लोक आरण्यकांड पृ० ३८७)

महर्षि बाल्मीकि, श्री रामचन्द्र द्वारा अहिल्या का चरण स्पर्श कराया जाता है परन्तु गोसाईं तुलसी दास जी ने वैदिक शिष्टाचार मर्यादा का लोप करके—

गौतम नारी शाप बस उपल देह धरि धीर।
चरण कमल रज चाहती कृपा करहु रघुबीर॥
परशत पद पावन शोक नशावन प्रकट भई तप पुंज मही।

(बाल कान्ड पृ० १२१)

ब्राह्मण ही नहीं ऋषि की पत्नी को पैर से छूना राम जैसे मर्यादा पुरुषोत्तम की कीर्ति में कलंक है।

परशुराम व राम से सम्वाद महर्षि बाल्मीकि दशरथ के सम्मुख विवाह के बाद लिखते हैं जिसमें राम का शौर्य प्रकट होता है।

तुलसीदास जी ने उन्हें ब्रह्म का अवतार बनाकर दो अवतार स्वयं राम और परशुराम का इतना विवाद का नाटक रचा कि दोनों ने न स्वयं को जाना और ना ही अन्य को जाना कि ये भी विष्णु के ही अवतार हैं एक समय में दो विष्णु परस्पर पहचान नहीं पाये।

अन्त में, ब्राह्मण कुल में अवतरित विष्णु का क्षत्रिय कुल में अवतरित विष्णु को हाथ जोड़ने पड़े। क्या यह गोस्वामी जी द्वारा स्थापित मर्यादा का अपमान नहीं है। क्योंकि स्पष्ट लिखा है—

"जोरि पाणि बोले वचन"

अतः श्री रामचन्द्रजी ने भी यदि उन्हें ऐसा करने दिया तब अपने वाक्य की 'पूजिय विप्र शील गुण हीना' पर हड़ताल फेर दी।

वैदिक मर्यादा है, युवावस्था में विवाह करना चाहिये। रामचन्द्र वेदों के पूर्ण अनुयायी थे और महाराज दशरथ आदि वैदिक परम्परा के रक्षक थे। (वेदधर्म रक्षक सुर त्राता। सुन्दर काण्ड पृ० ४९३)

इसी की पुष्टि महर्षि बाल्मीकि ने की। सीता ने रावण को स्पष्ट बतलाया—

मम भर्त्ता महातेजा वयसः पंच विंशकः।
अष्टादश हि वर्षाणि मम जन्म निगम्यते॥

(अरण्य कांड सर्ग ४१ श्लोक १०)

हमारे विवाह के समय हमारी अवस्था २५ तथा १८ वर्ष की थी।

गोस्वामीवाद ने इस वैदिक मर्यादा को तोड़कर इस्लाम के बालविवाह एवं अनमेल विवाह का पाप राम एवं उनके काल में प्रचलित कराया है।

मीन लग्न बृश्चिक के भानू, भयो व्याह आनन्द निधानू।
वर्ष पंच दश के रघुनाथा। सीय वर्ष छः की जग जाना॥
करि विवाह आये घरहि, मंगलमोद अपार।
द्वादश वर्ष विलासयुत, रहे कृपा आगार॥
वर्ष सताइस में रघुनाथा। कीन भवन बन लक्षमन साथा।
वर्ष अठारह की सिया सत्ताइस के राम।
कीनी मन अभिलाष तब करनी है सुर काम॥

(अयोध्या पृ० २२९)

यह सब क्रिया कलाप-कर्म न होकर लीला अर्थात् खिलवाड़ बतलाकर कर्म की महत्ता एवं प्रतिष्ठा गोस्वामी तुलसीदास जी ने समाप्त कर दी।

वेद में स्पष्ट आज्ञा है—

ओ३म् क्रतो स्मर क्लीवे स्मर कृतं स्मर (यजुर्वेद)

हे जीव ओ३म् का स्मरण कर, हे निर्बल जीव ओ३म् का स्मरण कर, हे पापात्मन् अपने किये कर्म को स्मरण करके उसके भोग को सहने हेतु ओ३म् का स्मरण कर।

यह मर्यादा महर्षि पतंजलि ने अपने योगदर्शन में आज्ञा दी—

तस्य वाचक प्रणव: तज्जयस्तदर्थं भावनम्॥

उस परमात्मा का नाम ओ३म् है, उसको जपता हुआ अर्थ को अपने में समाहित कर। इस परम्परा को ऋषि महर्षि एवं रामचन्द्र कृष्णचन्द्र करते थे। महर्षि व्यास देव जी ने लिखा है कि भीष्म पितामह जो कि वेद वेदांग के निष्णात पंडित तपस्वी थे, उन्होंने अपने प्राण प्रणव (ओंकार) को जपते हुये त्यागे।

गीता में श्री कृष्ण ने भी ओ३म् के स्मरण के आज्ञा दी है। क्योंकि वे स्वयं ओ३म् ओ३म् तत्सदिति निर्देया १७-२३

ईश्वर: सर्वभूतानां तथा तमेव शरणागच्छ १८-६१-६२ का स्मरण करते थे।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा—

जेहि कर नाम मरत मुख आवा,

अधमहुँ मुक्त होहि श्रुति गावा। (आरण्यकांड पृ० ४१९)

राम राम कहि जो जुमुहांही

कोटि कोटि मुनि जतन कराही अन्त राम मुख आवत नाहीं।

यह क्या श्रुति की निन्दा नहीं है। वेदों के विरुद्ध एवं श्री रामचन्द्र ऐसे महापुरुष जिनका जन्म ही वेदों की रक्षा हेतु हुआ और वैदिक मर्यादा की रक्षा हेतु

अनुव्रत: पितु: पुत्रो मात्रा भवन्तु संमना। —ऋग्वेद

पुत्र को पिता का अनुव्रती अर्थात् उसकी कामनापूर्ण करने वाला होना चाहिये। उन्होंने राज्य को छोड़ चौदह वर्ष वन में बिताये, पिता की मृत्यु का दुख सहा, पत्नी हरी गई। उसकी मर्यादा को कम करना नहीं है।

मंत्र परम लघु जासु विधि हरि हर सुर सर्व

(बाल कांड पृ० १५३)

ओंकार महामन्त्र के वश समस्त जगत है।

इसका जपन रामायण काल में दशरथ जी द्वारा बाण लगने पर श्रवण कुमार ने कहा—

अब तुम दीजै बाण निकारी। सुन दशरथ दुखित भये दुखारी।
हिय से जबहि निकारी बाना। ओं ओं कह तब छाँड़े प्राना।।

(क्षेपक अयोध्या कांड पृ० ३०२)

यह सिद्ध है कि ओम् का स्मरण करते रहने से मुक्ति होती है। इसके विपरीत राम राम कह कर प्राण त्यागने वाले दशरथ जी की गति।

राम राम कहि राम कहि, राम राम कहि राम।
तनु परिहरि रघुवर विरह, राउ गये सुर धाम।।

(अयोध्याकांड पृ० ३०४)

मुक्ति नहीं हुई। पुनः रावण के मरने पर दशरथ जी मिलने आये और रामचन्द्र जी के ज्ञानोपदेश के उपरान्त भी—

चितै पितहि दीन्हेऊ हठ ज्ञान।।
बार बार करि प्रभुहि प्रणामा, दशरथ हर्षि गये निज धामा।।

(लंका कांड पृ० ६४५)

जहां से आये थे सुर (देव) लोक गये पुनः भी मुक्ति नहीं हुई। वेदों के परम भक्त रामचन्द्र, वेदों की आज्ञा एवं परम्परा के

पालक थे। उसके लिये उन्होंने अनेकों कष्ट सहे—

पंच महायज्ञ, ब्रह्मयज्ञ, देव यज्ञ (अग्निहोत्र) पितृ यज्ञ, भूत यज्ञ (बलिवैश्य देव) तथा अतिथि यज्ञ दैनिक करते थे।

प्रातः सायं सन्ध्या अग्निहोत्र करते थे।
विश्वामित्र ने राम लक्षमण से कहा—

स्नाताश्च कृतजप्याश्च हुतहव्या नरोत्तम॥

१८ सर्ग १२३ बाल काँड)

हम लोग स्नान करेंगे और जप करके हवन (आहुति हवि देंगे) करेंगे।

तथैव गच्छतस्य व्यापायद्रजवीशिवा।
उपास्य तु शिवा सन्ध्या विषयानत्यगाहत।२। सर्ग ४९

(अयोध्याकांड)

उसी प्रकार उन रामचन्द्र को चलते-चलते कल्याणमयी रात्रि बीत गई। तब उन्होंने प्रातः होने पर कल्याणकारी प्रभु की (उपासना) सन्ध्या करके आगे को प्रस्थान किया।

(व्यापायत् रजनी शिवा।)

(कल्याणमयी रात्रि व्यतीत होने पर)

ततश्चीरोत्तरा संगः संध्यामन्वास्य पश्चिमाम्।
जलमेवा ददे भोज्यं लक्ष्मेणनाहृतं स्वयम्॥४८॥

सर्ग ५० अयोध्या

उसके पश्चात् सूर्य पश्चिम पहुँचने पर चीर ओढ़ कर रामचन्द्र ने सायंकाल की संध्या (उपासना) की, और लक्ष्मण का लाया हुआ जल ही ग्रहण किया।

भरतादि—

रजन्यां सुप्रभातायां भ्रातस्ते सुहृद्वृताः।

मदाकिन्यां हुतं जप्यं कृत्वा राममुपागमत् ॥२॥ सर्ग १०५
अयोध्या।

रात्रि बीतने पर अपने समस्त भाई मित्र (सुहृदों) के साथ मन्दाकिनी नदी के तट पर जप, आहुति (हवन) करने के उपरान्त राम के पास आये।

ऋषि मुनियों ने—
वासं चक्रुर्मुनिगणाः श्रीणाकुले समाहिताः।
तेऽस्तंगते हिन करे स्नात्वा हुंतहुताशनाः॥
२० सर्ग ३१ बालकांड

सूर्य अस्त होने पर स्नान करके उन मुनियों ने अग्निहोत्र (हुत हुता शनाः) किया।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी इसकी पुष्टि की—

विगत दिवस गुरु आयसु पायी। सन्ध्या करन चले दोऊ भाई।
(बालकांड पृ० १३३)

निसि प्रवेस मुनि आयसु दीन्हा। सब ही सन्ध्या बन्दन कीन्हा॥
(बाल कांड पृ० १२७)

इतनी पुष्ट वाक्यावली के होते हुये भी गोस्वामी जी को अपना एवं अपने काल का दोष रामचन्द्र पर मढ़ना कहां का न्याय है पढ़ें—

तब मज्जन करि रघुकुल नाथा। पूजि पारथिव नायऊ माथा॥
(अयोध्याकांड पृ० २७८)

लिंग थापकर विधिवत पूजा।
शिव समान मोहि प्रिय नहिं दूजा॥

महर्षि बाल्मीकि जी ने पुल निर्माण के समय इस घटना का

वर्णन नहीं किया। परन्तु जब श्री रामचन्द्र ने रावण को मार दिया। सीता के वापस आने पर पुष्पक विमान पर बैठने के उपरान्त लौटते समय उन्होंने अपने उस मार्ग एवं क्रियाओं को बताया, कि मैंने यह कार्य इस प्रकार किया। उसी प्रसंग में समुद्र पर पुल का वर्णन इस प्रकार किया—

एतत्र दृश्यते तीर्थं सागरस्य महात्मनः।
सेतुबन्ध इति ख्यातं त्रैलोक्य परिपूजितम् ॥२०॥
तत् पवित्रं परमं महापातकनाशनं।
अत्रपूर्वं महादेवः प्रसादम करो विभुः ॥२१॥

(युद्ध कान्ड सर्ग ११५)

यह बड़े समुद्र का तट दिखाई पड़ता है, इस स्थान पर हमने समुद्र की मर्यादा बांध कर इस पर पुल बांधा, जो हमारे (स्त्री हरे जाने का) महापातक से पवित्र करने वाला है। यह कर्म मैंने सर्व देवों में बड़े महादेव (ओ३म्) व्यापक परमात्मा की कृपा से किया।

इसमें लिंग स्थापना का कहीं संकेत नहीं स्पष्ट लिखा है, विभु (व्यापक) महादेव (परमात्मा) की कृपा से। परमात्मा व्यापक ही नहीं सर्वव्यापक है अतएव यहां उसी का संकेत है। लिंगपूजक (लिंगायत) अथवा मूर्ति पूजकों की चर्चा नहीं। ना ही रामचन्द्र जी ने इस अवैदिक कृत्य को किया।

मान्या सीता जी द्वारा भी--
त्यहि अवसर सीता तहँ आई। गिरजा पूजन जननि पठाई ॥

(पृ० १३८ बालकांड)

विनय प्रेम वश भई भवानी। खसी माल मूरति मुसकानी ॥

(पृ० १४२ बालकांड)

यह वेद विरुद्ध कर्म कराया।

यदि ऐसा होता तो हनुमान जी यह क्यों विचारते कि यदि सीता लंका में जीवित है तो—

सन्ध्या कालमनाः श्यामा ध्रुव मेष्यति जानकी।
नदीं चेमां शुभ जलाँ सन्ध्यार्थे वरणिनी ॥ (सु० कां० १४-४६

सन्ध्या काल में सन्ध्या करने के लिये जानकी इस राम जल वाली नदी पर नित्य यहीं आयेगी।

यस्य निःश्वसितं वेदाः यो देवेभ्यो अखिलं जगत।
निगमे तमहं बंदे विद्या तीर्थं महेश्वरम् ॥

ब्रह्म (परमात्मा) द्वारा (जन्माद्यस्यतः) जगत की सृष्टि स्थित और प्रलय होती है। वही परमात्मा (शास्त्र योनित्वात्) ज्ञान विज्ञान करण विद्या का योनि (आदि स्थान है उसका वाचक प्रणव (ओ३म्) है।

वही ज्ञान विज्ञान का मूल पूर्वेषाम् कालेन अनवच्छेदात् गुरू है।

सभी ज्ञान का मूल (वेदोऽखिलो धर्म मूलम्) वेद है। इसी कारण वह वेद ही (प्रमाण परम श्रुति) सबसे अधिक प्रामाणिक है। उसके आगे कोई प्रमाण नहीं है।

महर्षि बाल्मीकि ने—

इदं पवित्रं पापघ्नं पुण्य वेदश्च सम्मतम् ॥ बालकांड १-६८

यह रामायण पाप को नष्ट करने वाली, पुण्य देने वाली वेद और वेद के अनुकूल है।

श्री तुलसीदास जी ने भी लिखा—

इति वेद वदन्ति न दन्त कथा.........(लंका कांड पृ० ६४५)

सभी के साथ महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने तो वेद को स्वतः प्रमाण और अन्य को परतः प्रमाण में मानकर वर्तमान विश्व को वेदों की ओर लौट चलो का अद्‌भुत नारा दिया।

उसी आधार पर उन्होंने अपने समस्त ग्रन्थों की प्रामाणिकता वेद के आधार पर की इससे विरोधी से किसी भी मूल्य पर संधि नहीं की।

चाहे वह कितना भी प्रसिद्ध, प्रिय अथवा भयानक हो उसकी पोल खोल दी। और तुलसीकृत भाषा रामायण को मिथ्या (जाल) ग्रन्थ बड़े साहस से लिखा, यह मानकर

अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा न्यायात् यथा प्रविचलन्ति पदेन धीरः।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी अपने विष रस (अवतारवाद) को कनक घट (वेदों एवं अन्य शास्त्रीय प्रमाणों की उक्ति उपस्थित कर) में भरा और उसे लोगों को पिलाया।

वर्णाश्रम निज निज धरम, निरत वेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहिं, नहि भय शोक न रोग।।
दैहिक दैविक भौतिक तापा, राम राज्य काहू नहिं व्यापा।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं सुधर्म निरत श्रुति नीती ।।
चारिऊ चरण धर्म जग मांही। पुरि रहा स्वपनेहु जग माँही ।।
(उत्तरकाँड पृ० ६७३)
कोटिन बाजपेयि प्रभु कीन्हे। अमितदान विप्रन कहँ दीन्हे।
श्रुति पथ पालक धर्म धुरन्धर। गुणातीत अरु भोग पुरन्दर ।।
(उत्तर काँड पृ० ६७५)

विश्व रूप (रघुवंशमणि) करहुँ वचन विश्वास।
लोक कल्पना वेद कहि; अंग अंग प्रति जासु॥

पद पाताल शीश अज धामा।
अपर लोक अंगन्ह विश्रामा॥

भ्रकुटि विलास भयंकर काला।
नयन दिवाकर कच घन माला॥

जासु घ्राण अश्विनी कुमारा।
निशि अस दिवस निमेष अपारा॥

श्रवण दिशा दश वेद बखानी।
मारुत श्वास निगम निज वाणी॥

अधर लोम यम दशन कराला।
माया हास बाहुदिगपाला॥

आनन अनल अम्बुपति जीहा।
उत्पत्ति पालन प्रलय समीहा॥

रोमावली अष्ट दश भारा।
अस्थि शैल सरिता सजारा॥

उदर उदधि अधगोपातना।
जग मय प्रभु की बहुत कल्पना॥

अहंकार शिव बुद्धि अज, मन शशि चित्त महान।
मनुज बास चर अचर मय, रूप राशि भगवान॥
अस विचारि सुनि प्राणपति, प्रभु सन वैर विहाई।
प्रीति करहु रघुवीरपद, मम अहि बात न जाई॥

(लंका कांड पृष्ठ ५१७)

विनु पद चलै सुनै बिन काना, कर बिनु कर्म करैं विधि नाना॥
आनन रहित सकल रस भोगी, जिमि वाणी वक्ता वड़ भोगी।

तन बिनु परस नयन बिनु देखा, ग्रहे घाण बिनु वास अशेषा।
अस सब भांति अलौकिक करनी; महिमा जासु जाय नहिं वरनी।
जेहि इमि गावहिं वेद बुध, जाहिं धरहिं मुनि ध्यान।
सोइ दशरथ सुत भक्त हित, कोशलपति भगवान॥

बालकांड पृ० ६७)

वशिष्ट का उपदेश—

शोचिय विप्र जो वेद विहीना,
तजि निज धर्म विषय लव लीना।
शोचिय नृपति जो नीति न जाना,
जेहि न प्रजा प्रिय प्राण समाना।
शोचिय वैश्य कृपन धनवानू,
जो न अतिथि शिव भक्ति सुजानू।
शोचिय शूद्र विप्र अपमानी,
मुखरमान प्रिय ज्ञान गुमानी।
शोचिय पुनि पति वंचक नारी,
कुटिल कलह प्रिय इच्छा चारी।
शोचिय बटु ब्रत परिहरई,
जो नहि गुरु आयसु अनुसरहि।

शोचिय गृही जो मोह वश, करँ धर्म पथ त्याग।
शोचिय यती प्रपंचरत, विगत विवेक विराग॥

(अयो० पृ० ३१५)

जो परिहरि हरिहर चरण, भजहि भूत गण घोर।
तिन्ह की गति मोहि देऊ विधि, जो जननी मतमोर॥

(अयो० पृ० ३१३)

जो केवल पितु आयसु लीन्हा, तो जनि जाहु जान बड़ि माता॥

जो पितु मातु कह्यो वन जाता, तौ कालन शत अवध समाना।
।। अयोध्या०

उमा राम गुण गूढ़, पंडित मुनि पावहिं विरति।
पावहिं मूढ़ विमूढ, जो हरि विमुख न धर्म रति।।

(अरण्य पृ० ३८८)

प्रथम जन्म के चरित अब, कहौं सुनहु विहंगेश।
सुनि प्रभु पद रति उपजै, जातें मिटै कलेश।।१६८।।

पूर्व कल्प में एक प्रभु, कलियुग मलकर मूल।
नर अरु नारि अधर्म रत, सकल निगम प्रतिकूल।।१६९।।
(उत्तर कांड पृ० ७११, ७१२)

इस प्रकार की आड़ एवं वाक्जाल तथा छल का सहारा लिया। जिसने जाति को पतनोन्मुख कर दिया।

यदि उनके सिद्धान्तों को स्वीकार किया जाता तो समर्थ रामदास छत्रपति शिवाजी को धर्म हेतु मरने हेतु न प्रोत्साहित करते। माता जीजाबाई महापुरुषों की प्रेरणा देने वाली कहानियों से शिवा को इतना मनस्वी बनाती।

गुरू गोविन्द सिंह, बन्दा वैरागी, झाँसी की रानी आदि-आदि महावीर बलिदानियों की सेना का रूप न दिखाई पड़ता जिससे देश के मान, गरिमा, संस्कृति की रक्षा हो सकी।

अवतारवादी परमात्मा का अवतार लीला विशेषकर रसिक लीला हेतु होता है। यही अमृत के भरे घट में विष की बूँद है। जिसे भविष्य दृष्टा ऋषि दयानन्द ने निकाल कर फेंक देने का सन्देश दिया।

इस वर्तमान काल के अत्यन्त विवाद वाला दोहा—

ढोल गंवार शूद्र पशु नारी। ये सब ताड़न के अधिकारी ।।

(सुन्दर कांड पृ० ५०२)

जिसके कारण भारतीय संसद में बड़ी चर्चा रही, विपक्षी लोगों ने रामचरित मानस ग्रन्थ के पृष्ठों को फाड़कर अपना रोष प्रकट किया। अतएव इस विषय को टिप्पणीकार रामायणी बंधुओं ने लीपापोती करके मामला सुलझाने का प्रयत्न किया।

यह प्रसंग के अनुसार अर्थ यदि किया जाय और वर्तमान रामायणी महानुभावों को झूठी वकालत न करनी पड़े और तुलसी जी की सिद्धान्तहीनता के कारण इतना वड़ा विवाद न उठे।

यह वाक्य समुद्र ने रामचन्द्र से कहा है। समुद्र कौन है इसे विभीषण ने रामचन्द्र से कहा —

प्रभु तुम्हार कुल गुरु जलधि, कहहि उपाय विचारि।

विनु प्रयास सागर तरहिं, सकल भालु कपि धारि ।।

(सुन्दर कांड पृ० ४९८)

हे स्वामी समुद्र तुम्हारा कुल गुरु है, वह बिचार करके उपाय कहेंगे।

अब जब कि वह रामचन्द्र का कुलगुरु है तब उसे किस प्रकार ताड़ना का अधिकारी कहा जा सकता है। ना वह ढोल है नाही गंवार है, क्योंकि समुद्र की मर्यादा जगत प्रसिद्ध हैं, ना ही वह पशु है, नारी तो कहा ही नहीं जा सकता। फिर यह दोहा समुद्र द्वारा कहलाया तथा इसका प्रयोग किसी के द्वारा करना कितने घोरतम अपराध है।

महर्षि वाल्मीकि जी ने भी समुद्र को "सागरस्य महात्मना"

महात्मा सागर कहकर सम्बोधित किया है।

यह सब गोस्वामी जी, मर्यादा पुरुषोत्तम वेद भक्त राम को परब्रह्म बनाने की धुन में, अपनी समस्त काव्य काल को सार्थक बना डालने के लिये तथा समस्त जगत को मानव राम को ब्रह्म राम स्वीकार कराने हेतु किया।

अपना समस्त ताना बाना जाल रामचन्द्र के ब्रह्म (भ्रम) जाल में फँसाने हेतु किया। और निर्णय दिया।

श्रुति पुराण बहु कहिय उपाही, छूट न अधिक अधिक अरु भाई ॥
(उ० कांड पृ० ७२७)

यह फन्दा डालकर अपना भ्रम जाल फेंक दिया, चमत्कारवाद के आधार पर जिसकी दुनिया दीवानी है।

मनुष्यों का कर्तव्य सत्य को ग्रहण करना होता है मनुष्य सत्य जानना चाहते हैं ज्ञानी सत्य को बताते हैं परन्तु चालाक भी अपनी चाल चला करते हैं—

निराचार जो श्रुतिपथ त्यागी।
कलियुग सोई ज्ञानी विज्ञानी ॥
जाके नख अरु जटा विशाला।
सोई तापस प्रसिद्ध कलिकाला ॥
(उत्तर कांड पृ० ७१२)

मनुष्य का धर्म छल कपट रहित होता है। कपटी, छली व्यक्ति कभी भी पूजनीय नहीं होना चाहिये, परन्तु तुलसीदास जी की अलग परिभाषा है—

"विघन मनावहिं देव कुचाली" कुचाली देवता हो सकते हैं ? देवता तो पवित्रकर्मी एवं शुद्ध आचरण वाले तथा दिव्यता

कहा जाता

सम्पन्न व्यक्ति को कहता है। लेकिन पौराणिक परम्परा में जहाँ देव क्या देवों के राजा इन्द्र कुकर्मी हो सकते हैं फिर देवता की क्या बात? इसी कारण यह उपमा एवं तुलसीदास ने दिया।

यदि धर्म पालन करें तो वह प्रतापी हो जाता उसके प्रताप को क्षय करने हेतु उसके धर्म से विरत देवाधिदेव परमात्मा है। जिस कर्मके कारण उनको अव पड़ा और छल से रामावतार में बाली को छिपक पड़ा।

गोस्वामी जी कुछ भी लिखे उन्हें सब क्षम्य है का ब्रह्मास्त्र है—

"समरथ को नहिं दोष गुसाईं। रविपावक सुरसरि की नाईं।

अन्त में, उपसंहार करते हुये यहीं बताना शेष रह जाता कि गोस्वामी सनातन मर्यादा जिसकी रक्षा के लिये उनके राम अवतार लेते हैं अर्थात् वर्णाश्रम तथा वेद की मर्यादा स्थापना हेतु किसी को हरि भक्ति की झूठी घटा में—जिमि हरि भक्ति पाइ जन, तजहिं आश्रमी चारि।। (किष्किन्धा पृ० ४४७) लोप कर देना चाहते हैं।

अपहाय निज कर्म कृष्ण कृष्णेति वादिनः।
ते हरे द्वेषिणः पापा धर्मार्थं जन्म यद्धरे गीता ३।२४
श्री कृष्णाज्ञा को सार्थक पुत्रवती करे।।

(गीता रहस्य पृ० ५०१)

परम प्रभु सबों को सद्बुद्धि दो जिससे लोग ऋषि दयानन्द को समझकर तुम्हारा यथार्थ रूप जाने।

३-११-७८ — श्याम किशोर आर्य, सिद्धान्त शास्त्री

